International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493; Impact Factor: RJIF 5.46
Received: 05-09-2020; Accepted: 20-09-2020; Published: 06-10-2020
Volume 2; Issue 4; 2020; Page No. 01-02

राग दरबारी का उद्देश्य

सची नायक
MA, Hindi, Parvatibai Chowgule College of Arts and Science, Goa, India

प्रस्तावना

"रुप्पन बाबू ठहाका मारकर हँसे, "दादा यह शिवपालगंज है। यहाँ यह बताना मुश्किल है कि क्या सच है, क्या झूठा।"1 श्रीलाल शुक्ल द्वारा लिखित 'राग दरबारी' उपन्यास के अंत में यह वाक्य अखिल भारत की स्थिति को दर्शाता है। श्रीलाल शुक्ल जी का उपन्यास 'राग दरबारी' भले ही गँजहों के काल्पनिक गाँव, शिवपालगंज, में होने वाली ऊटपटाँग हरकतों को बड़े ही मजेदार तरीके से वर्णित करता हो, पर गाँव से बाहर निकलकर देखा जाए तो वह हमें एक कडवे सच से परिचय कराता है। देश में होने वाला पक्षपात काबिल व्यक्तियों पर इस तरह से कीचड़ उछालती है कि उनकी काबिलियत पर भरोसा करना लगभग नामुमकिन हो जाता है। शिवपालगंज के द्वारा लेखक हमारे स्वातंत्र्य देश की मूल्यहीन स्थिति को दर्शाता है।

भारत लगभग 200 सालों तक अंग्रेजों का गुलाम बनकर रहा। प्रजा अपने राजाओं पर आश्रित थी जो सामाजिक सरोकार या अपनी प्रजा के लिए कुछ नहीं करते थे। प्लासी युद्ध के बाद भारत अंग्रेजियों का गुलाम हुआ। कंपनी के शासन के बाद जनता महारानी विक्टोरिया के शासन में भी पिसने लगी। कई सारे स्वतन्त्रता संग्रामों तथा लड़ाइयों के बाद 1947 में भारत स्वतंत्र हुआ।

महात्मा गांधी जी स्वतन्त्रता के पश्चात् की स्थिति पर चिंतित थे। शासन किसके हाथ में होगा और वह अपना उत्तरदायित्व निभाएगा भी या नहीं, इसकी उन्हें चिंता थी। भारत के स्वतंत्र होने पर नेता अपने निजी स्वार्थों की पूर्ति करने लगे। पहले तो यह सीमित था। परंतु स्वार्थ बढ़ता गया। और आज भी हम इस बीमारी को अपने आसपास की अनेक स्थितियों में देख सकते हैं।

"इसके संदर्भ में गोपाल राय लिखते हैं कि- "रागदरबारी उत्तर प्रदेश के पूर्वांचल के एक कस्बानुमा गाँव शिवपाल गंज की कहानी है; उस गाँव की जिन्दगी का दस्तावेज, जो स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद ग्राम विकास और 'गरीबी हटाओ' के आकर्षक नारों के बावजूद घिसट रही है।"2

स्वतन्त्रता के पश्चात् नवभारत की आशा थी। जो लोग गरीब है, उन्हें शौचालय की सुविधा तथा पक्के मकान बनाने की आशा थी। परंतु 21वी सदी के आज तक भी देश के कोने-कोने में कई घरों में अभी तक शौचालय नहीं है। इस उपन्यास में इसी सच्चाई को जताया गया है। देश की स्थिति लोगों के आशाओं के विपरीत है। बच्चे पहलवानी तो करना चाहते हैं, पर न उनका शरीर स्वस्थ है न दिमाग। वे कुपोषित हैं। देश की स्थिति से और विस्तृत रूप से दर्शाते हुए लेखक लिखते हैं- "बिजली के झिलमिलाते हुए विज्ञापन थे जिनके प्रिय विषय सिगरेट और शराब थे। यहाँ आकर लगता था कि देश में रोटियाँ भले ही न मिलें, केक इफ़रात से मिल जाते हैं और अगर तुम्हारा गला पानी न मिलने के कारण सूख रहा है तो तुम बिअर पीकर तरोताजा हो सकते हो और अगर जरूरत पड़े तो मद्य-निषेध पर भाषण भी फटकार सकते हो। संक्षेप में, यहाँ आने से यही लगता था कि तुम्हें खाने-पीने-पहनने-ओढ़ने का कष्ट तभी तक है जब तक कि तुम जनता हो और अगर तुम इन कष्टों से छुटकारा चाहते हो तो जनतापन छोड़कर बड़प्पन हथियाने की कोई तरकीब निकालो।"3

लोकतन्त्र में चुनाव सब की मर्जी से होता है। परंतु वे सब कौन होंगे इसका निश्चय जीतने वाले ही करते हैं जो आज अत्यंत प्रासंगिक है। सनीचर जैसे नौकर जो केवल अंडरवियर पहने घर का काम करता है, गाँव-सभा का प्रधान बनता है। तमंचे के ज़ोर से कॉलेज में चुनाव लड़े जाते हैं। वैद्यजी कॉलेज के मैनेजर और कोओपरेटिव यूनियन के मैनेजिंग डाइरेक्टर है। यूनियन में हर बार की तरह वह गबन करता है और पैसों की भरपाई करने की अपेक्षा सरकार से करता है। अंत में यह मामला ऊपर तक जाता है। कोओपरेटिव इंस्पेक्टर जो सख्त और सच्चा है उसका तबादला करने की कोशिश भी होती है। जब असफल होता है, तब बड़ी चालाकी से वैद्यजी अपनी अवधि के खत्म होने पर त्यागपत्र देता है। वह कहता है कि गबन को छिपाया नहीं गया और यही हमारे यूनियन का वैशिष्ट्य है। गबन का इल्जाम दूसरे पर डाला जाता है। त्यागपत्र देने के बाद तुरंत चुनाव होता है, और जैसे बातों-बातों में ही वैद्यजी का बड़ा बेटा बद्री पहलवान मैनेजिंग डाइरेक्टर का पद हासिल करता है। इससे यह साबित होता है कि पूँजीवादी या शासित वर्ग अपना राज खोना नहीं चाहते हैं। वे जानते हैं कि लोगों को लूटकर वे मन चाहा कर सकते हैं, और उसके बावजूद समाज में अपना स्थान उच्च स्तर पर रख सकते हैं।

वैद्यजी जैसा नेता कामी है। अपने कार्यों पर ध्यान देने के बजाय वह रंगनाथ जैसे नौजवानों को ताकत पैदा करने और वीर्य बढ़ाने के नुस्के बताता है।

शिक्षा पद्धति पर टिप्पणी करते हुए शुक्ल जी ने कहा है- "वर्तमान शिक्षा पद्धति रास्ते में पड़ी कुतिया है, जिसे रास्ते में कोई भी लात मार सकता है।"4 हमारे देश में शिक्षित व्यक्ति के अभ्यास तथा स्मरण शक्ति की परीक्षा होती है और काबिलियत के अनुसार उन्हें जाँचा नहीं जाता। अनपढ़ों को जानवर कहा गया। कोई भी अपढ़ न रहे इसलिए बच्चों के हाथ से हल और कुदल निकालकर, उन्हें स्कूलों में भेजा गया। सभ्य बनाने की कोशिश में वे पाँच-छः साल तक फ़ेल होते रहते हैं, परंतु वापस किसानी करने के लिए उनमें लज्जा पैदा होती है। नकल करने, अफीम बेचने या गुंडागीरी करने के बावजूद स्कूल, कॉलेज चल रहे हैं। बच्चे पढ़ने के अलावा सब कुछ करते हैं। वहीं, शिक्षकों से उम्मीद की जाती है कि वे एक साथ दो कक्षाएँ संभालें वे भी अलग-अलग दर्जे की। अपने व्यक्तिगत स्वार्थों और दुश्मनियों को प्रिन्सिपल पढ़े-लिखे होने के बावजूद काम से निकालने की चेष्टा करता है जिसके द्वारा शिक्षा की स्थिति और दर्जे का अंदाजा होता है।

रुप्पन बाबू तीन सालों से दसवीं की कक्षा में पढ़ते हुए भी वैद्यजी के बेटे होने के नाते वे अपने स्कूल के स्थानीय नेता है। उनका परिचय लेखक ने कुछ इस प्रकार दिया है- "उनकी इज्जत थी कि पूंजीवाद के प्रतीक दुकानदार उनके हाथ समान बेचते नहीं, अर्पित करते थे और शोषण के प्रतीक इक्केवाले उन्हें शहर तक पहुँचकर किराया नहीं, आशीर्वाद माँगते थे। उनकी नेतागिरी का प्रारम्भिक और अन्तिम क्षेत्र वहाँ का कॉलिज था, जहाँ उनका इशारा पाकर सैकड़ों विद्यार्थी तिल का ताड़ बना सकते थे और जरूरत पड़े तो उस पर चढ़ भी सकते थे।"5

पुलिस स्टेशन में बहुत काम अटका पड़ा रहता है। इसका भी व्यंग्य करते हुए लेखक लिखते हैं- "इतना काम है कि अपराधों की जाँच नहीं हो पाती, मुकदमों का चालान नहीं हो पाता, अदालतों में गवाही नहीं हो पाती। इतना काम है कि सारा काम ठप्प पड़ा है।"6 एक ही थाना और दस-बारह सिपाही बीस गाँवों की सुरक्षा के लिए तैनात है। थाने का वातावरण रमणीक और मनमौजी है। फिल्मों में हम जिस प्रकार के दारोगा या इंस्पेक्टर देखते हैं, जो हालात-ए-मौके पर पहुँचकर गुनाह रोक सकते हैं या गुनहगारों को पकड़ सकते हैं, कुछ उसी प्रकार की आशाएँ इनसे की जाती हैं। लेखक कहते हैं- "संक्षेप में, दारोगाजी और उनके सिपाहियों को वहाँ पर मनुष्य नहीं, बल्कि अलादीन के चिराग से निकलनेवाला दैत्य समझकर रखा गया था।"7

जो सही काम करता है उसे भी गलत ठहरा जा सकता है। जब नया दारोगा वहाँ के थाने में प्रवेश करता है, तो वह पियक्कड़ जोगनाथ को गयादीन के घर हुई चोरी के जुर्म में पकड़ता है। अदालत में मुकदमा चलता है। छोटा पहलवान अपनी गवाही बदल देता है। और जोगनाथ जुर्म करने के बावजूद आजाद हो जाता है। दारोगा का तबादला हो जाता है, परंतु जोगनाथ उन पर दीवानी का झूठा दावा डालता है। वैद्यजी के लोग उसे परेशान करते हैं। ऐसे में उसे वापस शिवपालगंज आकर सच्चाई का रास्ता चुनने के लिए जोगनाथ से माफी माँगनी पड़ती है। यही नहीं, बल्कि बद्री पहलवान भी झूठी गवाही से एक हत्यारे को छुड़ाने के लिए दूसरे गाँव जाता है।

भ्रष्टाचार केवल पुलिस और प्रशासन में नहीं है बल्कि पत्रकारिता, वकील आदि हर पेशे में हैं। जहाँ संपादक को पैसा, शराब या उसकी मनपसंद वासना की पूर्ति करते ही वह झूठ-मूठ का किसी को जलील करने का काम या किसी को उच्च स्थान देने का काम करता है।

"गन्दगी की कमी को पूरा करने के लिए दो दर्जन लड़के नियमित रूप से शाम-सवेरे और अनियमित रूप से दिन को किसी भी समय पेट से स्वेच्छाचार से पीड़ित होकर तालाब के किनारे आते थे और- ठोस, द्रव तथा गैस- तीनों प्रकार के पदार्थ उसे समर्पित करके, हल्के होकर वापस लौट जाते थे।"8 महिलाओं को शौच के लिए सड़क के किनारे पर मजबूरन बैठना न केवल उनकी स्थिति परंतु गंदगी और रोगों को निमंत्रण देना और प्रकृति का समापन भी दर्शाता है।

गयादीन की बेटी को भरे अदालत में अपने स्वार्थ के लिए छोटे पहलवान बदचलन कहकर जलील करता है। गयादीन भी इससे कुछ नाराज नहीं होता है। रुप्पन बेला को चाहता है और बेला भी उसे चाहती है। रुप्पन के प्रेम पत्र पर जब वह अपना उत्तर देती है तब बद्री पहलवान उसे पढ़ता है। और अपने पिता से उससे शादी का जिक्र करता है। बेला का पिता गयादीन अपने ही बिरादरी के किसी शहरी व्यक्ति से उसकी शादी कराना चाहते हैं, यहाँ कोई बेला के मन की बात जानना आवश्यक नहीं समझता। नारी के निर्णय लेने के अधिकार की बात यहाँ की है।

छुआछूत की लड़ाई तो अन्य प्रयत्नों से खत्म हो गई है। परंतु जाति के अनुसार व्यक्ति से व्यवहार अभी तक चलता आ रहा है। इस उपन्यास में भी जताया गया है कि केवल दिखावे के लिए वैद्यजी अपने बेटे बद्री का रिश्ता लेकर गयादीन के पास जाता है। रिश्ता न बन पाने पर वह मन-ही-मन खुश होता है। गयादीन बनिया होने के कारण स्वयं संकुचित है।

यही नहीं पर वह चमरही नामक गली से नहीं गुजरना चाहता है, क्योंकि वहाँ के निम्न माने जाने वाले लोगों से उसे सम्मानजनक स्वागत की अपेक्षा है, जो स्वतन्त्रता पूर्व काल में सहज थी। "एक जमाना था कि किसी भी बाँभन-ठाकुर के निकलने पर वहाँ के लोग अपने दरवाजों पर उठकर खड़े हो जाते थे, हुक्कों को जल्दी से ज़मीन पर रख दिया जाता था, चिलमें फेंकी दी जाती थी, मर्द हाथ जोड़कर 'पाँय लागी महाराज' का नारा लगाने लगते थे, औरतें बच्चों को गली से हाथ पकड़कर खींच लेती थीं और कभी-कभी घबराहट में उनकी पीठ पर घूँसे भी बरसाने लगती थीं।"9

लेखक श्रीलाल शुक्ल 'राग दरबारी' में लोगों के समक्ष प्रश्नचिह्न खड़ा करते हैं कि क्या सच में स्वतंत्र भारत सुधर गया है? क्या इसे सुधारा जा सकता है? यथार्थ क्या है? लोग पढ़कर भी अनपढ़ क्यों रहे हैं? संकुचन और स्वार्थ विकास का विरोधी है, यह श्रीलाल शुक्ल जी 'राग दरबारी' द्वारा दर्शाते हैं।

संदर्भ सूची

1. श्रीलाल शुक्ल, राग दरबारी, पृ० 318
2. गोपाल, राय (2014). हिन्दी उपन्यास का इतिहास. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. पृ० 260.
3. श्रीलाल शुक्ल, राग दरबारी, पृ० 249
4. वही, पृ० 12
5. वही, पृ० 17
6. वही, पृ० 13
7. वही, पृ० 14
8. वही, पृ० 199
9. वही, पृ० 264
10. श्रीलाल शुक्ल, राग दरबारी, राजकमल पेपरबैक्स, 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली. चालीसवाँ संस्करण- 2018.